पुनर्जन्म का चिंतन तथा भारतीय इतिहास की अवधारणा

डॉ. रजत शर्मा
सहायक प्राध्यापक
लक्ष्मीबाई महाविद्यालय
दिल्ली विश्विद्यालय, दिल्ली (भारत)

Email ID: rajat.sh148@gmail.com

© रजत शर्मा, सर्वाधिकार सुरक्षित

Article Info: Received: 12-07-2025 Revised: 29-07-2025 Accepted: 18-08-2025 Published: 30-09-2025

शोध-सारांश:-

भारतीय इतिहास के संबंध में सामान्य दृष्टि है कि भारतीयों ने इतिहास नहीं लिखा। इस संबंध में पाश्चात्य तथा भारतीय चिंतकों के भिन्न-भिन्न मत है। यह मत भी विरोधाभासी रूप में दिखाई पड़ते हैं। इनके विरोधाभासी होने का एकमात्र कारण भारतीय इतिहास का विशिष्ट स्वरूप का होना है। पाश्चात्य चिंतन इस विशेष स्वरूप को ना देखकर अनेक कारणों के आधार पर भारत में इतिहास परंपरा के अविकास को परिभाषित करते आये हैं। इन्हीं कारणों में 'पुनर्जन्म' का सिद्धांत प्रमुख है। जबकि पुनर्जन्म के सिद्धांत के माध्यम से भारतीय इतिहास के विशिष्ट स्वरूप को समझा जा सकता है। इसी को समझने का प्रयास प्रस्तुत शोध-पत्र में हुआ है।

मुख्य शब्द:- इतिहास-लेखन, भारतीय इतिहास-चिंतन, पाश्चात्य इतिहास-चिंतन, पुनर्जन्म, इतिहासकार, आदर्श, यथार्थ, जीवन-दर्शन, भारतीय-संस्कृति।

भारतीय इतिहास को लेकर मैक्डानल्ड का विचार है कि प्राचीन भारतीयों ने अपने अतीत का इतिहास प्रस्तुत नहीं किया, उनमें ऐतिहासिक विवेक था ही नहीं। ऐसा कहते हुए वह भारत में इतिहास-लेखन की अनुपस्थिति को सूचित करते हैं। (Macdonell, 1990) यही धारणा अन्य विद्वानों के मत में भी दृष्टिगत होती है। पार्जिटर का भी मानना है कि प्राचीन भारत ने हमें इतिहास-ग्रन्थ नहीं दिये हैं। वह लिखते हैं – "Ancient India has bequeathed to us no historical works." (Pargiter, 1922) 1030 ई. में अरब यात्री अलबरूनी 'तहकीक-ए-हिंद' में हिंदुओं का इतिहास-लेखन के प्रति असावधान होने तथा कहानी कहने एवं सुनने के प्रति रुझान होने को कारणरूप में रखते हैं। अलबरूनी की यह दृष्टि साहित्य-शैली को ऐतिहासिक-वस्तुनिष्ठता को खंडित करने वाली मानती है। 'इतिहासवाद' भी इसी मत को पुष्ट करता है। अलबरूनी के मत को एस.आर. शर्मा आगे बढ़ाते हैं। उनका मानना है कि इतिहास-लेखन के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है वह भारतीय वाङ्मय में मौजूद है लेकिन

उनमें केवल अल्प ही इतिहास के लक्षणात्मक रूप में दिखाई देते हैं। अतः इस प्रकार वह इतिहास-तत्वों को स्वीकारते हुए भी इतिहास की अनुपस्थिति को रेखांकित करते हैं (Sharma, 1939)।
भारतीयों में इतिहास-बोध की अज्ञेयता के कारणों के संबंध में विद्वानों के भिन्न मत हैं। जैसाकि पूर्व में अलबरूनी के मत को उद्धृत किया जा चुका है कि वह भारतीयों की कहानी कहने एवं सुनने की प्रवृत्ति को भारत में इतिहास-लेखन के न पनपने के कारणरूप में देखता है। वहीं जे. डब्लू. मैकक्रिंडल ब्राह्मणों के स्वभाव को इतिहास-लेखन के लिए उपयुक्त नहीं मानते (Kalota, 1979) वहीं आर.जी. भटनागर भारतीयों की इतिहास-चेतना को तृप्त करने में मिथकों की अहम भूमिका को स्वीकारते हैं। (Bhandarkar, 1928)

भारतीय इतिहास के आलोचकों में ए.बी. कीथ प्रमुख हैं। भारतीय इतिहास की आलोचना करते हुए वह भारतीय वाङ्मय में पाश्चात्य-भूमि में विकसित इतिहास की अवधारणा तथा विकास को सापेक्षता में रखते हैं। वह भारत में इतिहास एवं इतिहासकारों के न होने के पीछे इतिहास-बोध को स्वीकारते हैं (Keith, 1920)।इतिहास-बोध को केंद्र में रखते हुए वह इतिहास-बोध के न पनपने के कारणों पर विचार प्रस्तुत करते हैं। वह भारत में राष्ट्रवाद की भावना के न होने को भी इतिहास-बोध के निर्माण में बाधक मानते हैं। वह कहते हैं कि जब पर्शियन ग्रीक पर आक्रमण करते हैं तब हेरोडोटस में इतिहास-बोध जागृत होता है (Keith, 1920)। इस प्रकार कीथ जब भारतीय इतिहास की आलोचना करते हैं तब वह पाश्चात्य कसौटियों पर भारतीय इतिहास-बोध का मूल्यांकन करते हैं। वह कर्म, पुनर्जन्म तथा नियति के सिद्धांत को इतिहास-बोध के विकास में बाधक मानते हैं (Keith, 1920) ।

इतिहास में घटनाओं की कालक्रमिकता आवश्यक होती है। घटनाओं के तटस्थ वर्णन के आधार पर ही इतिहास की वस्तुनिष्ठता को बचाने का कार्य इतिहासकार करता है। कीथ विचारकर कहते हैं कि भारतीय विद्वानों में वक्तृता की कमी थी, जो कि घटनाओं का इतिवृत्तात्मक वर्णन कर इतिहास को निर्मित करने के लिए आवश्यक है। उनका मानना था कि भारत के प्रचलित सिद्धांत खासतौर से कर्म तथा पुनर्जन्म का सिद्धांत घटनाओं के अनुमान में बाधक है। भारतीय जनमानस अपने वर्तमान कर्मों को पूर्वजन्मों का परिणाम मानते हैं, जिस कारण वह अपने वर्तमान कर्मों के कारणों को अतीत में नहीं ढूंढते, बल्कि अपने अतीत कर्मों को नियति रूप में स्वीकार कर आगे बढ़ जाते हैं।

भारतीय इतिहास-बोध को लेकर विद्वानों की यह सामान्य दृष्टि है। विश्व में ऐसे अनेक देश हैं जहाँ इतिहास-लेखन का विशिष्ट स्वरूप दिखता है। इन इतिहास-लेखनों को स्वीकृति भी प्राप्त है। परन्तु भारत के संबंध में एक सिरे से इतिहास की अनभिज्ञता को रेखांकित किया गया है। इसका एक कारण भारतीय चिंतकों का पाश्चात्य दृष्टि की ओर अधिक झुकाव होना है। उस झुकाव का परिणाम

भारतीयों का स्वयं पर से विश्वास का उठ जाना रहा। इसकी पुष्टि नलिन विलोचन शर्मा के कथन से हो जाती है –

"इतिहास-विषयक विभावन से भिन्न, इतिहास-संबंधी आधारभूत सामग्री का भी प्रश्न है? क्या उसपर प्राचीन भारतीयों ने ध्यान दिया था? इस संबंध में भी हमारी ऐसी धारणा हो चली है कि प्राचीन भारतीयों के प्रयत्न अव्यवस्थित, अपूर्ण और सदोष हैं।" (शर्मा, 1959)

निष्कर्षतः भारतीय इतिहास-बोध को नकारते हुए भी विद्वानों के दो मत दिखाई देते हैं। पहला, वह मत जो भारत में इतिहास-बोध को पूर्णतः अस्वीकार करता है। दूसरा, वह मत जो भारत में इतिहास-लेखन को अस्वीकारते हुए भी इतिहास-चेतना को स्वीकार करता हैं। ए.एल. बाशम का कथन निष्कर्षात्मक रूप में इसी दृष्टि को पुष्ट करता है – *"भारत के पास इतिहास की कोई अवधारणा थी या नहीं, लेकिन इनके पास अतीत की एक जीवंत भावना जरूर थी।"* (ए.एल. बाशम, 1999)

ए.बी. कीथ दो भिन्न जीवनदृष्टियों के मध्य केंद्रीय धुरी पर खड़े होने का प्रयास करते हैं। लेकिन केवल एक जीवनदृष्टि के आधार पर दूसरी का मूल्यांकन करते हैं। यह दो भिन्न दृष्टियां भारतीय एवं पाश्चात्य हैं। यह जीवन दृष्टियां चिंतन को प्रभावित ही नहीं करतीं, बल्कि चिंतन के आधारभूत मानदंडों को निर्मित भी करती हैं। पाश्चात्य चिंतन-दृष्टि भौतिकता को महत्ता देती है तो भारतीय चिंतन आध्यात्मिकता को। पाश्चात्य जीवनदृष्टि को समझाते हुए रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं –

"यूरोप में जहाँ शुरू से ही इन देशों में नस्लवादी एकता रही है और यहाँ रहने वाले लोगों के लिए प्राकृतिक संसाधनों की कमी रही है - सभ्यता का सहज ही में राजनीतिक व व्यापारिक आक्रामकता वाला चरित्र रहा है।" (टैगोर, 2003)

पाश्चात्य जगत की भौगोलिक संरचना उसे भौतिकतावादी दृष्टि निर्मित करने में अहम भूमिका अदा करती है। पाश्चात्य मनुष्य का सबसे बड़ा संघर्ष जीवन को बचाये रखने का संकट रहा है। इसीलिए वे प्रकृति से संघर्ष करते हुए सभ्यता का विकास करते हैं। यह दबाव उन्हें प्राकृतिक संसाधनों के अस्तित्व को स्वीकार करने को मजबूर ही नहीं करता, अपितु उनकी दृष्टि को निर्मित भी करता है। यह भौतिकतावादी दृष्टि इतिहास के अवधारणात्मक विकास में वस्तुनिष्ठता को प्रश्रय देती है।

भारत का भूगोल प्राकृतिक रूप से सहज ही साधन संपन्न रहा है। ऐसे में भारतीय दृष्टि आध्यात्मिक प्रश्नों को चिंतन के केंद्र में स्थापित करती हुई शाश्वत मूल्यों को स्वीकार करती है। यह शाश्वतता मनुष्य को कालबद्ध होने से इतर कालातीत होने के लिए प्रेरित करती है। यही कारण है कि

इतिहास-प्रक्रिया में अतीत को तथ्यात्मक रूप से विश्लेषित करने की पद्धति भारतीय चिंतन का केंद्र नहीं बनती। बल्कि मनुष्य का आध्यात्मिक उत्थान ही उसके केंद्र में दिखाई देता है। यही कारण है कि महाभारत में इतिहास की परिभाषा के अंतर्गत पुरुषार्थ चातुष्ट्य को स्थान दिया गया है।

धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते।।

वहीं भारतीय चिंतन-दृष्टि वर्तमान इतिहास-लेखन की कसौटियां से भिन्न रूप में दिखाई देती हैं। इतिहास जहाँ घटनाओं को काल की निश्चित कड़ी में स्थिर करने की मांग करता है, ताकि ऐतिहासिक-वस्तुनिष्ठता को बनाये रखा जा सके। इसके विपरीत भारतीय चिंतन कालातीत होने की बलवती इच्छा को सर्वोपरि रखता है। इसी कारण काल की एकरेखीय अवधारणा के विपरीत चक्रीय अवधारणा का विकास पुराणों में होता है। वहीं इतिहास काल को एकरेखीय विकास के रूप में देखते हुए प्रत्येक घटना के पीछे निश्चित कारण-कार्य संबंध को मौजूद मानता है। इस प्रक्रिया का अनुगमन करते हुए वह मनुष्य के वर्तमान कर्मों को अतीत के कर्मों का परिणाम मानता है। वह ऐतिहासिक-चरित्रों को आदर्शात्मकता के आवरण के साथ शाश्वत मूल्य से संवलित करते हुए उसे कालातीत-चरित्र में बदल देते हैं।

ए.बी. कीथ कर्म तथा पुनर्जन्म के सिद्धांत और सर्वशक्तिमान नियति के विधान का उल्लेख करते हुए भारत में इतिहास-बोध के न होने की व्याख्या करते हैं। पुनर्जन्म का यह सिद्धांत हिंदू, बौद्ध तथा जैन तीनों धर्मों में स्वीकृति पाता है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो भारतीय चिंतन और आस्था की तीन प्रणालियों – हिंदू, बौद्ध और जैन – ने इस सिद्धांत पर गहन चिंतन प्रस्तुत किया है। यह सिद्धांत मनुष्य के वर्तमान जीवन को पूर्व-जन्मों के कर्मों का प्रतिफल मानता है। हिंदू धर्म इसकी व्याख्या आत्मा का नये रूप में पुनः प्रकटीकरण से जोड़ता है। वहीं बौद्धधर्म 'प्रत्युत्पय समुत्पाद' के सिद्धांत द्वारा उसे वैज्ञानिक बनाने का प्रयास करता है। पुनर्जन्म के तर्क पर आश्रित कीथ के इतिहास-विरोधी-विचारों को रखते हुए श्रीधरन लिखते हैं –

"इन सिद्धांतों में विश्वास के प्रभाव अनगिनत, अबोधगम्य और कल्पनातीत है। यदि मनुष्य के जीवन उनके पिछले जन्मों के क्रियाकलापों के परिणाम होते तो कोई यह नहीं कह सकता था कि सुदूर अतीत का कौन-सा कृत्य अपना अपरिहार्य साध्य निश्चित करने के लिए प्रकट नहीं हो सकता और मनुष्य की योजनाओं तथा क्रियाकलापों के लिए कभी अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न करके और कभी उन्हें निरस्त करके नियति उसे आश्चर्यचकित कर सकती थी।" (श्रीधरन, 2011)

स्पष्ट है कि पुनर्जन्म के सिद्धांत का अनुकरण करने पर मनुष्य का ध्यान अपने अतीत कर्मों से विमुख होता है। वह अतीत के घटनाकर्म को भविष्य के उद्भव के रूप में नहीं देखेगा। जबकि इतिहास अतीतोन्मुख होकर भविष्य को उज्ज्वल करने के उद्देश्य से प्रेरित है। इसी उद्देश्य को सामने रखते हुए इतिहास अतीत की घटनाओं को उद्धृत कर शिक्षा प्राप्त करता है ताकि अतीत में हुई गलतियों को पुनः न दोहराये। अतीत के कर्मों द्वारा भविष्य की संभावनाओं को देख सके। परन्तु पुनर्जन्म के सिद्धांत के साथ इतिहास की यह दृष्टि अप्रेषणीय हो जाती है। अतः यह माना गया कि कर्म तथा पुनर्जन्म के चिंतन को प्रधानता देने के कारण इतिहास-बोध नहीं पनपा।

ए.बी. कीथ भारतीय इतिहास-बोध के न पनपने के पीछे इसी तर्क को कारण रूप में प्रस्तुत करते हैं। यह तर्क इतिहास-बोध के निर्माण की प्रक्रिया को समझने में सहायक है। परन्तु भारतीय-इतिहास के स्वरूप के निर्धारण को इससे समझा नहीं जा सकता। इतिहास सामान्यतः भविष्य को उज्ज्वल बनाने के लिए वर्तमान कृत्य को महत्व देता है तथा वर्तमान को उज्ज्वल करने के लिए अतीतोन्मुख होता है। यह सीख वह अपनी कमियों से तथा तत्कालीन समाधानों से लेता है। अपनी कमियों पर दृष्टि रखने के कारण वह अतीत को यथावत् प्रस्तुत करने के उद्देश्य पर जोर देता है। अतीत को यथावत् चित्रित करने का आग्रह ही इतिहास में यथार्थवादिता को महत्व देता है।

भारतीय वाङ्मय के आधारभूत उद्देश्य पर दृष्टिपात करें तो मनुष्य के जीवन को अच्छा करना ही उसकी केंद्रीय दृष्टि है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को उपदेशात्मक रूप में अभिव्यक्त करना ही इतिहास का उद्देश्य माना गया। यह स्पष्ट है कि मनुष्य जीवन को किस प्रकार उच्च लक्ष्यों की ओर प्रेरित करें। यही भारतीय वाङ्मय के समान इतिहास का भी उद्देश्य रहा। अतः इसी उद्देश्य को सामने रखकर भारतीय इतिहास का स्वरूप निर्मित हुआ। परन्तु इसके निर्माण की पूर्व-प्रक्रिया समकालीन इतिहास-बोध से भिन्न रही। जैसाकि पूर्व ही इंगित किया गया है कि समकालीन इतिहास पूर्व की घटनाओं के आधार पर सीख ग्रहण करता है। जबकि भारतीय इतिहास-बोध पुनर्जन्म पर विश्वास करते हुए भी पूर्वपुरुषों अथवा इतिहास-चरित्रों, घटनात्मक कथाओं, उपदेशों, गाथा, पुराण आदि को आदर्शात्मक लक्ष्यों की तरह प्रस्तुत करता है।

यथार्थगत होते हुए कमियों से सीखना तथा आदर्श को अपनाकर उच्च लक्ष्यों तक जाना – यह दो दृष्टिगत भिन्नताएं हैं, जोकि इतिहास-बोध को भिन्न रूप में निर्मित करती हैं। यह इतिहास-बोध इतिहास-लेखन को वैशिष्ट्य प्रदान करता है। यह वैशिष्ट्य ही भारतीय तथा पाश्चात्य इतिहास-लेखन के भिन्न प्रारूपों में विकसित हो भारतीय इतिहास को समझने में अवरोधक बनता है।

निष्कर्ष :-

पुनर्जन्म के सिद्धांत को स्वीकार करें तो वर्तमान कर्म महत्वपूर्ण हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जबकि पूर्व जन्म के कर्म वर्तमान जन्म को प्रभावित करते हैं और वर्तमान कर्म भावी जन्म को प्रभावित करेंगे। ऐसे में मनुष्य अतीत में हो चुके कर्मों को नियति मानकर वर्तमान की ओर प्रवृत्त होता है। उसका उद्देश्य वर्तमान कर्मों को अच्छा करना होता है ताकि वह भावी जन्म को सार्थक कर सके। अतः स्पष्ट है कि पुनर्जन्म की अवधारणा व्यक्ति को अतीत से विमुख करती है। वह अतीत में हुई गलतियों को भूलकर वर्तमान को अच्छा करने की ओर अग्रसर होता है। लेकिन इस आधार पर यह कहना कि उसमें इतिहास-बोध नहीं पनप सकता, गलत होगा। वर्तमान कर्म को अच्छा करने के लिए वह भी अतीत का सहारा लेता है। परन्तु वह अतीत की गलतियों से सीखने के उद्देश्य से यथावत नहीं देखता। अपितु वह आदर्श स्थितियों की खोज अतीत में करता है। आदर्शात्मकता के निर्वाह में अतीत को यथावत रखने का आग्रह नहीं करता। यही कारण है कि यथातथ्यता भारत में मौजूद ऐतिहासिक सामग्री में नहीं दिखाई देती।

सन्दर्भ

Bhandarkar, R. G. (1928). *Introductory Early History of the Dekkan.* Calcutta: Chukervertty Chatterjee & Co. Ltd.

Kalota, N. S. (1979). *India as Described by Megasthenes.* Delhi: Concept Publishing Company.

Keith, A. (1920). *A History of Sanskrit Literature.* Oxford University Press.

Macdonell, A. A. (1990). *A History of Sanskrit Literature.* New York: D. Appleton and Company.

Pargiter, F. (1922). *Ancient Indian Historical Tradition.* Oxford University Press.

Sharma, S. (1939). *A Bibliography of Mughal India.* Bombay: Karnataka Publishing House.

ई. श्रीधरन. (2011). *इतिहास-लेख एक पाठ्यपुस्तक.* दिल्ली : ओरियंट ब्लैकस्वान.

नलिन विलोचन शर्मा. (1959). *साहित्य का इतिहास-दर्शन.* पटना : बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद.

पाठक विश्वम्भरशरण ए.एल. बाशम. (1999). *भारत के प्राचीन इतिहासकार.* दिल्ली: ग्रंथ शिल्पी (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड.

रवीन्द्रनाथ टैगोर. (2003). *राष्ट्रवाद.* भारत: राष्ट्रीय पुस्तक न्यास.

इस शोध-पत्र को संदर्भित करने हेतु:

शर्मा. (2025). पुनर्जन्म का चिंतन तथा भारतीय इतिहास की अवधारणा. पत्रिका आरण्यक - साहित्य एवं मानविकी की पत्रिका, 1(1), September 2025. **सितम्बर २०२५**